खुली बाजारोन्मुखी अर्थव्यवस्था में जोखिम प्रबन्धन*

राकेश मोहन

पीटर एल. बर्नस्टीन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'अगेन्स्ट दि गॉड्स' में लिखा है, ''वह क्रान्तिकारी विचार जो आधुनिक काल और भूतकाल के बीच की सीमाओं को परिभाषित करता है - वह है जोखिम पर अधिकार'', यह विचार कि भविष्य देवताओं के मूड से कुछ ज्यादा है और यह कि पुरूष और स्त्री प्रकृति के सम्मुख निष्क्रिय या उदासीन नहीं हैं। जब तक मनुष्यों ने उस सीमा के पार कोई रास्ता नहीं ढूंढ़ लिया होगा तब तक भविष्य भूतकाल का दर्पण है या आप्त व्यक्तियों तथा भविष्यवक्ताओं का वह आवृत्त या अंधकारपूर्ण स्थल है जो पूर्व प्रत्याशित घटनाओं की जानकारी पर एकाधिकार रखते हैं'' (बर्नस्टीन 1996)।

जहाँ जोखिम प्रबन्धन अलग-अलग क्षेत्रों में हमारी गतिविधियों की विशेषता को चित्रित करता है - लगभग सभी औद्योगिक वस्तुओं और मशीनरी से जुड़े मानक प्रौद्योगिकीगत जोखिम प्रबन्ध से लेकर जलवायु के परिवर्तन तथा विश्व के गर्म होने तक के बारे में चिंता तक। वित्त के क्षेत्र में जोखिम प्रबन्धन इसकी सभी गतिविधियों के मूल में है। आम तौर पर व्यापार को खोल देने तथा विश्व भर में पूंजी के आवागमन ने गत डेढ़ दशकों से जोखिम का प्रबन्धन सम्पूर्ण वित्तीय क्षेत्र में व्याप्त हो गया है। एक आबद्ध अर्थव्यवस्था में जिसमें नियंत्रित मूल्य होते हैं, निश्चित या पूर्वानुमानित विनिमय दर और ब्याज दरें होती हैं, वहॉ जोखिम की व्यष्टिमूलक संकल्पना अपेक्षाकृत कम थी। उन परिस्थितियों में वास्तव में यह सरकार ही थी जो अर्थव्यवस्था के लिए जोखिम का प्रबंधन करती थी। इन प्रणालियों में व्याप्त जटिलताओं के फलस्वरूप आर्थिक समायोजन दिन-प्रति-दिन के क्रमिक आधार पर नहीं होते थे और तदनुसार जोखिम प्रभावी रूप से संचित होता रहता था, जब तक कि अचानक व्यापक आर्थिक समायोजनों को बलपूर्वक प्रणाली पर लागू नहीं कर दिया जाता था। इस प्रकार के अचानक समायोजन विनिमय दर, ब्याज दरों, बुनियादी वस्तुओं के नियंत्रित मूल्यों या राजकोषीय व्ययों तथा इसी प्रकार अन्य मदों में काफी बड़े समायोजन समाहित थे जिनका प्रभाव व्यक्तियों और बाजार सहभागियों पर

* डा. राकेश मोहन, उप गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा 4 जून 2007 को सेंटर फॉर एडवांस्ड फाइनेंसियल लर्निंग, मुंबई में उद्घाटन कार्यक्रम में दिया गया भाषण। इस व्याख्यान की तैयारी में के.दामोदरन तथा हिमाद्रि भट्टाचार्य की सहायता को साभार स्वीकार किया जाता है।

समान रूप से सामान्य तौर पर अपेक्षाकृत आघातपूर्ण था और उनके परिणाम आर्थिक तथा वित्तीय संकटों पर समान रूप से थे। इसके अलावा ऐसी प्रणालियों में संसाधनों के गलत आबंटनों, मूल्यों की अस्थिरता के दौर और इसके परिणामस्वरूप निम्न और अनिश्चित आर्थिक वृद्धि झेलती पड़ती थी।

यह धारणा कि अलग-अलग आर्थिक एजेंट विनिमय दर, ब्याज दर तथा मूल्य जोखिमों को व्यक्त करने में समर्थ नहीं हैं और यह कि केवल सरकार को ही इन जोखिमों को वहन करना चाहिए, अब स्वीकार्य नहीं है। अब यह मान लिया गया है कि ऐसी प्रणाली जो ऐसे मूल्य परिचालनों के दैनिक बाजार समायोजन की अनुमति देती है, ज्यादा सुचारू रूप से परिचालित होती है, तथा यह कि जोखिमों का आर्थिक एजेंटों के बीच अधिक व्यापक रूप से आबंटन आर्थिक और वित्तीय स्थिरता को बनाये रखने के लिए अधिक अनुकूल है। तथापि यह मुद्दा कि आर्थिक जोखिमों को सरकार, वित्तीय मध्यस्थकों, बड़े निगमों, छोटे व्यापारियों, किसानों और परिवारों तथा आर्थिक एजेंटों की अन्य श्रेणियों के बीच कैसे बांटा जाए, अभी भी एक ज्वलंत प्रश्न बना हुआ है। इस सम्बंध में आम तौर पर यह स्वीकार कर लिया गया है कि जोखिम के घटित होने तथा विभिन्न एजेंटों को इसे वहन करने की क्षमता के बीच कोई साम्यता या अनुरूपता होनी चाहिए।

1970 के बाद के दशक में तथा उसके बाद के दशकों में प्रभावशाली अर्थव्यवस्थाओं के प्रभावहीन व्यापक आर्थिक कार्य-निष्पादन का परिणाम जोखिम पर सोचने के रूप में बदल गया है जिससे यह अनुभव किया गया कि यह कहीं अधिक दक्षतापूर्ण होगा यदि अलग-अलग एजेंटों को बाजार-प्रणाली-तंत्र के जरिये जोखिमों से निपटने, उनका अन्तरण करने तथा प्रबन्धन करने दिया जाए। 1971 में ब्रिटन वुड्स प्रणाली को असफल होने की घटना प्रमुख मुद्राओं की 'सामान्यीकृत सचल' विनिमय दरों के युग में घटित हुई। सोवियत प्रणाली की असफलता के बाद शुरू हुए क्रमिक अपविनियमन, पूंजीगत नियंत्रणों में ढील / या समाप्ति तथा वैश्वीकरण ने जोखिम प्रबन्धन की संकल्पना की पृष्ठभूमि तथा प्रोत्साहन भी प्रदान किये तथा इसकी परम्पराएं भी उभरकर सामने आयीं और विकसित हुईं।

इस नये प्रतिमान की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि इसका तात्पर्य यह नहीं है कि सभी जोखिमों को बीमा जैसे उत्पादों के द्वारा समाप्त कर दिया जाए जो कि लम्बे समय से मानव जाति के लिए ज्ञात हैं। यहाँ मुख्य मुद्दा जोखिम उत्पादों के लिए बाजार में जोखिमों के मूल्य निर्धारण का है। जोखिम-उत्पादों में - नकदी तथा व्युत्पन्नी दोनों में - गहन और तरल बाजारों के विकास, जिन्हें परिमाणात्मक वित्त में उल्लेखनीय प्रगति द्वारा बल मिला, ने जोखिम प्रबन्धन के लिए इसे एक अनुशासन तथा व्यवसाय के रूप में उभर कर आना सम्भव बनाया। परन्तु जोखिम प्रबंधन को इस रूप में देखने का तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि वित्तीय बाजारों में सरकार या विनियामकों के लिए कोई भूमिका नहीं है।

गत दो दशकों में, भारत में आर्थिक और वित्तीय परिदृश्य में भारी परिवर्तन हो चुके हैं, जिनमें वास्तविक और वित्तीय क्षेत्रों दोनों में हुए व्यापक सुधार स्पष्ट उल्लेखनीय हैं। 1993 के प्रारम्भ में रुपये के एकल और बाजार आधारित विनिमय दर को अपनाना, उसके बाद 1994 में चालू खाते की परिवर्तनीयता, 1999 में नये विदेशी मुद्रा कानून का अधिनियम बनना तथा गत दशक में उल्लेखनीय स्तर तक हालांकि क्रमिक रूप से पूंजी खाते के उदारीकरण ने भारत और शेष विश्व के बीच चालू और पूंजी दोनों प्रकार के खातों में लेनदेनों के परिमाणों में कई गुना वृद्धि हुई है। साथ ही, ब्याज दरों का अपविनियमन, मौद्रिक नीति के लिए अप्रत्यक्ष लिखतों का महत्तर उपयोग, बैंकों के संसाधनों पर सांविधिक पूर्व-क्रयों में कमी ने भारत में अल्पावधिक तथा दीर्घावधिक ब्याज दरों के लिए तरल बाजारों के उभरने के लिए मार्ग प्रशस्त किया है।

इन सभी गतिविधियों का अच्छा परिणाम यह हुआ कि जहाँ संसाधनों का आबंटन तथा उपयोग अधिक दक्ष हो गया है जिसने उच्चतर वृद्धि की धड़कनों को उभारा है, अब आर्थिक एजेंटों के पास चयन के लिए अधिक विकल्प तथा झेलने के लिए अधिक प्रतिस्पर्धा हो गयी है। साथ ही अब दैनिक आधार पर निपटने के लिए अधिक जोखिम भी हैं। दूसरे शब्दों में आर्थिक एजेंटों के लिए बढ़े हुए असवरों के साथ-साथ प्रबन्धन के लिए नये प्रकारों के जोखिम भी हैं।

वर्तमान और निकट भविष्य की व्यापक प्रवृत्तियों के चिह्न स्पष्ट हैं। शेष विश्व के साथ आर्थिक और वित्तीय सम्बन्ध अनेक आयामों में और भी फैलेंगे। इस सम्भावना से देखने पर भारत में आर्थिक एजेन्टों को इस योग्य होना चाहिए कि अन्यत्र कहीं भी अपने प्रतिभागियों और प्रतिस्पर्धियों से सामना कर प्रवेश पा सकें। इस सम्बंध में एक अनिवार्य अपेक्षा यह है कि जोखिम प्रबन्ध प्रणालियां और प्रक्रियाएं तथा भारत में जोखिम प्रबन्ध के उत्पादों का बाजार विश्व स्तर का हो।

जैसे-जैसे हम नयी जोखिम प्रबन्ध प्रणालियों की शुरुआत करते हैं, विद्यमान प्रणालियों को उन्नत करते हैं तथा जोखिम-प्रबन्ध के उत्पादों के लिए नये बाजारों का विकास करते हैं, तो हमारे लिए भारत में विद्यमान यथार्थ परिस्थितियों को ध्यान में रखना बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाता है। हमें देश में विभिन्न आर्थिक एजेंटों के बीच भिन्न-भिन्न जोखिम वहन करने की क्षमताओं को निरन्तर ध्यान में रखना होगा। विभिन्न वित्तीय मध्यस्थकों के बीच भी अकेले परिवारों और किसानों के साथ-साथ छोटे और व्यापक रूप से दूर-दूर संस्थाएं भी हैं जैसे प्राथमिक कृषि ऋण समितियां, ग्रामीण एवं शहरी सहकारी बैंक, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक, निजी क्षेत्र के नये प्राईवेट बैंक तथा विदेशी बैंक जिनमें से प्रत्येक की जोखिम प्रबन्ध के सम्बंध में अलग-अलग स्तर की क्षमताएं हैं। अतः देश में आधुनिक जोखिम प्रबन्ध की लिखतों तथा प्रणालियों की शुरूआत करते समय हमारा दृष्टिकोण, विवश होकर, हमारी अपनी अपेक्षाओं और क्षमताओं के अनुरूप होना चाहिए।

वित्तीय मध्यस्थकों और वास्तविक क्षेत्र की संस्थाओं में जोखिम प्रबन्धन

जोखिम प्रबन्धन को संचालित करने वाले व्यापक सिद्धान्त वास्तविक और वित्तीय दोनों क्षेत्रों में वही हैं, तथापि बैंक तथा अन्य वित्तीय मध्यस्थक संस्थाओं में उनके तीन उल्लेखनीय विशिष्टताओं के कारण जोखिम प्रबन्ध को अतिरिक्त महत्त्व प्राप्त है, (i) वे कहीं अधिक सहायता प्राप्त हैं; (ii) वे जनता के धन को रखती हैं, तथा (iii) भुगतान प्रणालियां बैंकों के माध्यम से परिचालित होती हैं।

आम तौर पर बैंकों को ऋण और ब्याज दर जोखिम का अधिक सामना करना पड़ता है; जबकि वास्तविक क्षेत्र की संस्थाओं को विशेषकर जो कि अन्तरराष्ट्रीय व्यापार और पण्य विनिर्माण, प्रसंस्करण या व्यापार में संलग्न हैं, विदेशी मुद्रा विनिमय दर तथा पण्य मूल्य के जोखिमों को अधिक झेलना पड़ता है, परन्तु पण्य मूल्य जोखिम जिसे उधारकर्ता को झेलना पड़ सकता है, वह उनके उधारदाताओं के लिए ऋण जोखिम में बदल जाता है।

जोखिम प्रबन्धन बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के लिए इसलिए अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि वे 'जोखिम के ईंजन' हैं। वे जोखिम लेते हैं, वे उन्हें रूपान्तरित करते हैं और वे उन्हें अपने उत्पादों और सेवाओं में समाहित कर देते हैं। बैंकों के लिए जोखिम आधारित संव्यवहारों को लागू करने के लिए सशक्त प्रोत्साहन हैं, प्रबन्धन की दृष्टि से जोखिम और प्रतिलाभ का संतुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत करना, प्रतिस्पर्धी बेहतर स्थिति विकसित करना तथा विनियामक अपेक्षाओं का अनुपालन करना।

जैसा कि सारे विश्व में होता है, भारत में बैंकों को बेहतर जोखिम प्रबन्धन के मानकों और संव्यवहारों को प्रोन्नत करने में एक बहुत ही विशेष भूमिका निभानी है। वे

ऋण जोखिम के मुख्य भण्डार-गृह हैं, अतः उनकी ऋण आस्तियों की गुणवत्ता इस पर निर्भर करती है कि उनकी जोखिम प्रबन्ध नीतियां, प्रोसेस तथा प्रक्रियाएं कितनी प्रभावी हैं। स्वयं उनके उधार लेने वाले ग्राहकों में अलग-अलग जोखिम वाहक विशेषज्ञता होगी, अतः बैंकों से यह आशा की जाती है कि वे जोखिम प्रबन्धन पर अपने ग्राहकों को व्यावसायिक सलाह प्रदान करें। इस प्रकार बैंकों के पास अच्छे व्यावसायिक कारण हैं कि वे जोखिम प्रबंध में विशेषज्ञता तथा व्यावसायिक दक्षता प्राप्त करें। तथापि, यह केवल तभी सम्भव होगा यदि बैंक स्वयं अपने जोखिमों के अच्छे प्रबन्धक हों।

इससे जुड़ा एक और मुद्दा है, हालांकि वह थोड़ा गहन है। पूंजी बाजार के विपरीत बैंकों के पास अपने ग्राहकों के बारे में कहीं अधिक व्यापक और समृद्ध सूचना के आधार हैं। जहाँ वित्तीय संसाधनों की मध्यस्थता करने में बैंकों की अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति इस बात पर निर्भर करती है कि प्रथम स्थान पर ही सूचना के प्राप्त करने और उसके प्रसंस्करण में उनकी प्रमात्रागत मितव्ययिता तथा सम्भावना कितनी है, इस संदर्भ में एक प्रासंगिक मुद्दा यह है कि क्या यह सूचना जोखिमों का प्रबन्धन करने के लिए अलग बैंकों के स्तर तथा समग्र दोनों स्तरों पर अधिकतम उपयोग में लायी जा रही है। हालांकि यह आकलन करना अभी जल्दबाजी होगी कि कुछ महत्त्वपूर्ण सुरक्षोपायों के अन्दर आम उपयोग के लिए रखी गयी महत्त्वपूर्ण उधारकर्ताओं सम्बंधी सूचना को एक जगह संगृहीत करने के लिए ऋण सूचना ब्यूरो द्वारा उपलब्ध करायी गयी संस्थागत प्रणाली-तंत्र कितना प्रभावी है। इस सूचना को और अधिक गहन और व्यापक रूप में प्रयोग में लाने की महत्ता को रेखांकित करने की जरूरत प्रतीत नहीं होती।

इसके अलावा जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था विकसित होती जाती है तथा परिदृश्य में नये प्रकार की गतिविधियां तथा उद्यम उभर कर आते हैं, तो बैंकों के लिए यह अपेक्षित होगा कि वे इस प्रकार की गतिविधियों में जुड़े जोखिमों का आकलन करने में समर्थ हों। जैसा कि अन्यत्र भी होता है यह भी महत्त्वपूर्ण रूप से सभी संगत सूचनाओं के संग्रहण और विश्लेषण पर निर्भर होगा।

जोखिम प्रबन्धन के लिए कारोबारी दृष्टिकोण

जोखिम प्रबन्धन समग्र कारोबारी आयोजना तथा प्रबन्धन का अंतरंग भाग है, न कि ऐसा कुछ बाहरी भाग जिसे अलग से जोड़ना पड़े। जब रिज़र्व बैंक ने 1999 में आस्ति-देयता प्रबन्ध (एएलएम) का ढांचा शुरू किया था, तो कुछ बैंकों ने प्रारम्भ में इसे परिपक्वता विसंगति का पता लगाने या विसंगतियों का पुनः मूल्य निर्धारण करने के एक अभ्यास के रूप में माना था। जब बैंकों ने एएलएम विवरणों को संकलित करना शुरू किया तभी उन्होंने आस्ति देयताओं के प्रबन्धन को सक्रिय रूप से अनुसरण करने के लाभों को स्वयं महसूस किया। भारत तथा अन्यत्र भी बासेल II की ओर अन्तरण के संदर्भ में जहाँ मुख्य ध्यान मुख्य रूप से जोखिम प्रबन्धन पर है, तो कुछ बैंकों की यह धारणा है कि यह केवल उनके अनुपालन की लागत को बढ़ा रही है। अतः उन्होंने इसे अनुपालन का मुद्दा मानने की प्रवृत्ति दर्शायी। बासेल-II का प्रयास है कि अधिक उन्नत जोखिम प्रबन्ध प्रणालियों को प्रोन्नत किया जाए जो विनियामक पूंजी के समान आर्थिक पूंजी के नजदीक हों और इस प्रकार पूंजी के उपयोग में महत्तर दक्षता को प्रोन्नत किया जाए। गत कुछ वर्षों के अनुभव से जिसने विदेशी मुद्रा विनिमय दर और ब्याज दरों में परिभ्रमण को देखा है, यह स्पष्ट है कि बेहतर जोखिम प्रबन्धन नीतियों और प्रणालियों वाले बैंक आघातों और उद्वेगशीलता को झेलने में अधिक समर्थ हैं और इस प्रकार वे अपने विभिन्न पण्यधारकों के लिए अधिक मूल्य का निर्माण कर रहे हैं। बासेल-II बैंकों को अवसर प्रदान करता है कि वे अधिक दक्ष बनें। इस तथ्य को विनियामक अपेक्षाओं से अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए।

जोखिम प्रबन्धन बैंकों के कारोबारी परिचालनों के केन्द्र में है या एक ओर कोने में, यह विभिन्न प्रकार के जोखिमों के मूल्य निर्धारण मे प्रकट होता है। वर्तमान

में, भारत में बैंकों द्वारा विभिन्न प्रकार के ऋणों और अग्रिमों पर लगायी जाने वाली ब्याज दरें असामान्य रूप से काफी व्यापक दायरे में भिन्न-भिन्न हैं जैसे 6 प्रतिशत से 16 प्रतिशत तक और कुछ मामलों में तो इससे भी उच्चतर हैं। मिलने आने वाले (आगन्तुक) बैंकर मुझे बताते हैं कि यह दायरा अन्य बाजारों में देखे जाने वाले दायरे से कहीं व्यापक है। यदि यह सच है तो यह ऐसा मामला है कि जोखिम में भिन्नता अन्य देशों के उधारकर्ताओं की तुलना में भारतीय उधारकर्ताओं में काफी ज्यादा है या इसे ऐसा कह सकते हैं कि हमारे बैंकों की जोखिम मूल्यांकन की तकनीकें दोषपूर्ण हैं और यह कि वे जोखिम की सच्ची भिन्नता को बढ़ा चढ़ाकर देखते हैं या यह बात है कि ऋण के मूल्य निर्धारण को वैज्ञानिक तरीके से जोखिम से नहीं जोड़ा गया है जिससे विसंगतिया पैदा होती हैं जैसे कि ऋण बाजार में परस्पर सब्सिडी देना? यह ऐसा भी हो सकता है कि ऋण मूल्यांकन की आनुपातिक लागत अपरिहार्य रूप से ऋण के आकार पर निर्भर करती है और बैंक ऋण के मूल्यांकन की लागत के लिए उच्च ऋण की कीमत चुकाता हो। इस संदर्भ में ऋण-सूचना ब्यूरो की शुरूआत, जिसका पहले उल्लेख किया गया था, ऋण आकलन परम्पराओं में काफी अंतर ले आये। ऋण जोखिम का गलत मूल्य निर्धारण एक ऐसा मुद्दा है जो सर्वांगीण संवेदनशीलता को शुरू किये जाने के अलावा छोटे उधारकर्ताओं के लिए कल्याणकारी निहितार्थ भी रखता है। बैंकों को इन उधारकर्त्ताओं / सम्भावित उधारकर्त्ताओं पर सभी संगत सूचना एक पहुँचने की सुविधा होती है और वे विभिन्न प्रकार के जोखिमों के बीच विभेद करते हुए अपने हित में उनका उपयोग करने की बेहतर स्थिति में होते हैं। इसके अलावा आज बैंक इसके लिए अच्छी तरह तैयार हैं कि वे अपनी रेटिंग की प्रक्रियाओं को प्रतिपक्षी पार्टी के आकलन की पारम्परिक प्रक्रियाओं के अलावा प्रतिपक्षी पार्टी की गतिविधि का आकलन करने की रेटिंग प्रक्रियाओं की ओर पुनः मोड़ें।

बासेल II के संदर्भ में इस पर जोर देने की जरूरत है कि पूंजी की मात्रा चाहे जितनी भी क्यों न हो, वह वित्तीय संस्था को पूर्णतः सुरक्षित नहीं कर सकती। मुख्य मुद्दा है - जोखिम के उचित मूल्य निर्धारण का। यदि जोखिम प्रबन्धन तथा पूंजी-पर्याप्तता के सम्बंध में पूर्णतः अनुपालन के रुझान को लिया जाए तो इस बात का खतरा है कि यह बैंकिंग को ''सीटबेल्ट लगाकर सुरक्षित होने के कानून'' जैसा होगा। जैसा कि अनेक देशों में सीट बेल्ट का प्रयोग करने के अधिदेशात्मक उपयोग करने वाले देशों के अनुभवों ने दर्शाया है, यह जल्दी है स्पष्ट हो जाता है कि ड्राईवर अधिक जोखिम लेने को तैयार हो जाते हैं, क्योंकि वे अपने आप को ज्यादा सुरक्षित समझते हैं। जोखिमों का उचित प्रबन्धन मुख्य मुद्दा है। जोखिम प्रबन्धन को जोखिम लेने की गतिविधि के साथ समन्वित होना चाहिए। व्यक्ति को अपने द्वारा समझे गये जोखिमों के अनुरूप अपनी स्थिति बनाने की जरूरत है। जिन जोखिमों की समझ भलीभांति न हुई हो, उनसे बचा जाना चाहिए।

दबाव परीक्षण

मूल्यों, विनिमय दरों, और ब्याज दरों में महत्तर उतार-चढ़ाव की अपेक्षा से जुड़े बढ़े हुए जोखिम का समाधान दबाव परीक्षण के लिए नियमित प्रणालियों को विकसित करने की जरूरत है। वास्तव में, महत्तर जोखिम से सम्बद्ध पूंजी-पर्याप्तता से उभरी अत्यधिक संतुष्टि की काट है - नियमित रूप से दबाव परीक्षण का उपयोग और उनकी सतर्कता।

विश्व भर में, दबाव परीक्षण बैंकों की जोखिम प्रबन्ध प्रणालियों का अंतरंग भाग बन गया है, तथा उसका प्रयोग वित्तीय परिवर्तियों में कुछ न होने वाली, परन्तु सत्याभासी घटनाओं या गतिविधियों के प्रति अपनी सम्भावित संवेदनशीलता को मापने के लिए किया जाता है। उपर्युक्त पृष्ठभूमि में भारत में बैंकों को जरूरत है कि वे जोखिम प्रबन्ध के साधन के रूप में ''दबाव परीक्षणों'' को अपनायें।

इस पर अप्रैल 2006 में गवर्नर द्वारा घोषित की गयी वार्षिक नीति सम्बंधी वक्तव्य में जोर दिया गया है। इस सम्बंध में जारी मार्गदर्शी दिशानिदेशों के मसौदे को अब बाजार सहभागियों से प्राप्त प्रतिसूचना के आधार पर अन्तिम रूप दिया जा रहा है। बैंकों की कारोबारी रणनीतियों में भविष्यगामी तत्व को शामिल करने के लिए एक दक्ष दबाव परीक्षण ढांचे को शामिल करना जरूरी है। बैंक तभी अच्छा करेंगे जब वे दबाव परीक्षण को केवल एक विनियामक अपेक्षा के रूप में नहीं, बल्कि अपनी जोखिम प्रबन्धन प्रक्रियाओं के अंतरंग भाग तथा बासेल II के अनुपालन के रूप में अपनायें। दबाव परीक्षणें के परिणामों को यथोचित रूप से जोखिम प्रबन्ध प्रक्रियाओं में, कारोबारी रणनीतियों तथा पूंजीगत आयोजना में समन्वित किया जाना चाहिए।

जैसे कि दबाव परीक्षण उद्यम स्तर पर महत्त्वपूर्ण है, अतः हमें अपनी दबाव परीक्षण प्रक्रियाओं को सर्वांगीण स्तरों पर भी उन्नत करने की जरूरत है। एशियाई वित्तीय संकट के पश्चात तथा वैश्विक वित्तीय संरचना पर बढ़ी हुई चर्चा के संदर्भ में, विश्व बैंक तथा आइएमएफ ने 'वित्तीय प्रणालीगत आकलन कार्यक्रमों' के लिए एक नयी प्रक्रिया की शुरूआत की है। भारत पहला देश था जिसने 1999 में इसको स्वैच्छिक रूप से स्वीकार किया। अब हम उस अभ्यास को अद्यतन बनाने की प्रक्रिया में हैं, जिसे हम स्वयं कर रहे हैं, ताकि ऐसे आकलन कार्यक्रम प्रणाली के अन्दर ही समाहित हो जाएं। ऐसा कार्यक्रम सरकार तथा वित्तीय क्षेत्र के सभी विनियामकों के बीच दृष्टिकोणों तथा सोच को समन्वित करने में सहायता करता है।

परिचालनगत जोखिम का प्रबन्धन

परिचालनगत जोखिम का आकलन अन्य प्रधान जोखिमों अर्थात् ऋण जोखिम या बाजार जोखिमों के साथ किया जाता है और सामान्यतया जोखिम-विवरणी के आधार पर स्वतंत्र रूप से इसका आकलन नहीं किया जाता। परिचालनगत जोखिम प्रबन्धन विशेषकर बैंकों के लिए प्रासंगिक हैं क्योंकि यद्यपि वे अपने अन्य प्रमुख जोखिमों अर्थात ऋण और बाजार जोखिमों की सम्भावनाओं के एक भाग को अन्तरित या सुरक्षित कर सकते हैं, वहीं परिचालनगत जोखिम को सुरक्षित या अन्तरित नहीं किया जा सकता। इसके अलावा बैंक उत्तरोत्तर रूप में लेनदेन प्रसंस्करणों, आस्ति प्रबंध सेवाओं, नकदी प्रबंध सेवाओं तथा उन्नत उत्पादों की बिक्री को अपना रहे हैं, जो काफी राजस्व भी सृजित कर रहे हैं। बैंकों ने अपने ऋण तथा बाजार जोखिमों के प्रबन्धन के लिए मॉडलों का प्रयोग करना भी शुरू कर दिया है और इससे उन्हें मॉडल जोखिम का भी सामना करना पड़ता है। बैंक अपने परिचालनों के अधिकांश भाग के लिए और साथ ही कुछ महत्त्वपूर्ण परिचालनों के लिए कम्प्यूटरों और सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग अधिकाधिक रूप में कर रहे हैं और इससे भी उन्हें काफी सीमा तक परिचालन गत जोखिम का सामना करना पड़ता है। इसके अलावा, बैंकों को काफी मात्रा में अपनी प्रतिष्ठागत जोखिम को भी झेलना पड़ता है, जिसे अभी तक अनेक बैंकों में औपचारिक रूप में बोर्ड तक नहीं लाया गया है और उस पर भारी जोखिम घटक के रूप में विचार नहीं किया गया है। क्योंकि उपर्युक्त कारणों से परिचालनगत जोखिम ने अपनी जटिलता को बदल दिया है, अतः बैंकों को इस सम्बंध में एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत है ताकि वे अपने परिचालन जोखिम के प्रति अपनी सम्भावनाओं की एक सम्पूर्ण तस्वीर सामने रख सकें।

परम्परागत रूप से, परिचालनगत जोखिमों के कुछ पहलुओं को आन्तरिक निरीक्षण तथा लेखा परीक्षा के माध्यम से न्यूनतम करने के प्रयास किये जाते हैं, तथापि, इस कार्य को पुनर्गठित करके अधुनातम बनाने की जरूरत है, ताकि इसे ऐसी प्रक्रिया-तंत्र में रूपान्तिरत किया जा सके जो सम्पूर्ण गतिविधियों में परिचालनगत जोखिमों के लिए लागू की जा सके।

हाल के वर्षों में सारे विश्व में परिचालनगत जोखिम के मुद्दे को महत्ता प्राप्त हुई है और उसमें बाह्य स्रोतों से यह कार्य कराने को अधिक बल मिला है, खासकर विदेशों

में। भारत इस प्रकार के बाह्य स्रोतों में प्रमुख प्राप्तकर्त्ता होने के कारण इस मुद्दे का हमारे लिए और भी महत्त्व बढ़ जाता है। बैंकों तथा अन्य वित्तीय मध्यस्थकों को यह समझना होगा कि अपने बाह्य स्रोतों से परिचालित उनके परिचालनों में परिचालनगत जोखिम प्रबन्धन उनका अपना उत्तरदायित्व है। इस मुद्दे पर वित्तीय विनियामकों के बीच काफी चर्चा हुई है कि किस सीमा तक बाह्य स्रोतों वाली संस्थाओं में जोखिम प्रबंध प्रक्रियाओं की जांच करनी चाहिए और किस प्रकार वे विनियमित संस्थाओं में जोखिम प्रबन्ध प्रक्रियाओं का आकलन कर सकते हैं क्योंकि वे उनके सेवा प्रदाताओं से संबंधित हैं।

जोखिम प्रबन्धन तथा वित्तीय व्युत्पन्नियों का उपयोग

गत पांच वर्षों में वित्तीय व्युत्पन्नियों के उपयोग में हुए भारी विस्तार का निहितार्थ वित्तीय क्षेत्र के विनियामकों के बीच अधिकाधिक चर्चा को आकर्षित कर रहा है। हम वित्तीय स्थिरता तथा सर्वांगी जोखिम पर उनके प्रभाव का आकलन कैसे करें? इस आम मुद्दे पर सर्वाधिक सारगर्भित और सुबोध चर्चा जो मैंने अब तक सुनी है - वह अभी लगभग दो सप्ताह पहले अमरीका के मेरे प्रतिपक्षी फेडरल रिज़र्व बैंक के डोनाल्ड कोहन के संक्षिप्त भाषण में है। इसे जिस अत्यधिक सारगर्भित रूप में उन्होंने रखा है - वह इस प्रकार है - 'बंधकों तथा अन्य आस्तियों का प्रतिभूतिकरण विनियमित डिपोजिटरी संस्थाओं को ब्याज दर जोखिम तथा ऋण जोखिम के धारकों से ऐसे जोखिम के उत्पन्नकर्त्ताओं और वितरकों के रूप में रूपान्तरित कर रहा है' (कोहन 2007)।

वित्तीय व्युत्पन्नी लिखतों के सम्बंध में भारत में क्या स्थिति है?

भारत में वित्तीय व्युत्पन्नी लिखतों का उपयोग

वायदा विदेशी मुद्रा संविदाओं के लिए एक तरल बाजार भारत में अब से कई दशकों पहले से विद्यमान रहा है। यह उत्पाद अभी भी भारत में विदेशी मुद्रा जोखिम की हेजिंग (सुरक्षित करने) के लिए मुख्य साधन है, हालांकि विदेशी मुद्रा आप्शंस भी अधिकाधिक लोकप्रिय होते जा रहे हैं। गत 10 वर्षों से व्युत्पन्नी लिखतों के अन्य कई प्रकारों का भारत में लेनदेन होने लगा है। जैसा कि आप जानते हैं, भारत में ऋण-व्युत्पन्नी लिखतों की शुरूआत करने के प्रयास जारी हैं। विदेशी मुद्रा फ्यूचर्स के लिए व्यावहारिकता की सम्भावनाओं का पता लगाने का कार्य शुरू हो चुका है। ब्याज दर फ्यूचर्स के लिए उपयुक्त डिजाइन के लिए भी प्रयास चालू हैं। हाल के वर्षों में, वित्तीय व्युत्पन्नी लिखतों के लिए विनियामक इको सिस्टम को अधिक प्रभावी एवं सरल बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं। भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 में संशोधन द्वारा 2006 में एक नये अध्याय III घ का समावेश इस संबंध में मील का पत्थर रहा है क्योंकि इसने ओटीसी व्युत्पन्नी लिखतों को कानूनी स्पष्टता प्रदान कर दी है तथा विनियामक अधिकार-क्षेत्र और व्याप्ति को भी पारिभाषित कर दिया है। बैंकों में वित्तीय व्युत्पन्नी लिखतों के लेखांकन सम्बंधी व्यवहार को भी दुरुस्त किया जा रहा है ताकि वह मोटे तौर पर अन्तरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप हो सके।

जैसे-जैसे भारत में वित्तीय व्युत्पन्नी लिखतों का चलन बढ़ेगा तो ऐसे कौन-कौन से मुद्दे होंगे जिन पर हमें ध्यान देना होगा? हमें यह समझना होगा कि जैसा कि डोनाल्ड कोहन की टिप्पणियों से पता चलता है, जिसका उद्धरण मैंने अभी दिया था, हम समय के साथ-साथ वित्तीय क्षेत्र के मध्यस्थकों के कार्य में उल्लेखनीय परिवर्तन देखेंगे, जैसे-जैसे वित्तीय व्युत्पन्नी लिखतों को ताकत प्राप्त होती है। हमें विनियामक की दृष्टि से इन परिवर्तनों के लिए वैसे ही अपने आपको तैयार करना होगा, जैसे वित्तीय मध्यस्थक अपने आन्तरिक जोखिम परिचालनों ने लिए अपने आपको तैयार करेंगे। जैसा कि कुछ विकसित बाजारों के मामले में हुआ है, प्रतिभूतिकरण की वृद्धि तथा व्युत्पन्नी लिखतों के विस्तार के साथ-साथ यदि बैंक, जो ऋण-जोखिमों के

भण्डारगृह हैं, इस स्थान को काफी सीमा तक छोड़ दें, तो वित्तीय स्थिरता के लिए इसका क्या निहितार्थ होगा।

जोखिम के अधिक वितरण के साथ हमें उस मुद्दे से निपटना होगा जहाँ जोखिम विद्यमान है। हमें बाजार सहभागियों की क्षमताओं का भी आकलन करने की जरूरत है जिन्हें अन्ततः इन जोखिमों को वहन करना है। क्या वे ऐसे हो सकते हैं कि विनियामकों को उन्हें विनियमित न करना पड़े? क्या वित्तीय विनियामकों को यह जानने की भी जरूरत है कि जोखिमों को कहाँ-कहाँ बाँटा गया है? एक विचार यह है कि जहाँ तक इस बाजार में बड़े संस्थागत निवेशक हैं या उच्च निवल मालियत वाले व्यक्ति हैं, उन्हें किसी संरक्षण की जरूरत नहीं होगी। इस जोखिम को उनके बीच वितरित कर देना चाहिए जो ऐसा जोखिम उठाना चाहें, और इसे स्वयं बाजार द्वारा निर्धारित उनकी क्षमता के अनुसार वितरित किया जाना चाहिए। इसलिए किसी ऐसे सेफ्टी नेट की जरूरत नहीं है जैसा कि केन्द्रीय बैंकों की अन्तिम उधारदाता की भूमिका में आन्तरिक रूप से जुड़ा है। इन बाजारों में क्या महत्त्वपूर्ण होगा वह यह है कि सभी समयों पर बाजार में पर्याप्त तरलता बनी रहे ताकि वे दक्षतापूर्वक परिचालन कर सकें और बाजार सहभागियों को इसके लिए समर्थ बनाया जा सके कि जब भी आवश्यक हो वे इन्हें खरीद और बेच सकें। तब विनियामकों का कार्य यह सुनिश्चित करना होगा कि बाजारों में पर्याप्त गहनता हो, यह कि समाशोधन और निपटान प्रक्रियाएं दक्ष और सुरक्षित हों, यह कि ऐसा कोई प्रधान बाजार सहभागी न हों जो बाजारों को हांक सके तथा यह कि खिलाड़ी स्वयं बड़े और उन्नत हों। बाजार में दबाव आने की स्थिति में केवल एक ही मुद्दा होगा - पर्याप्त चलनिधि की उपलब्धता। ऋण तथा अन्य वित्तीय व्युत्पन्नी लिखतों में हुई असाधारण वृद्धि होने के बावजूद यह तुलनात्मक रूप से अभी भी नयी लिखत है और यह कि यह हाल के वर्षों में जी-3 देशों की निभावपरक मौद्रिक नीतियों के संदर्भ में घटित हुई है। यह आकलन करना बहुत जल्दीबाजी होगी कि दबाव की घड़ियों में ऐसे बाजार किस प्रकार कार्य करेंगे और तब समग्र विनियामक दृष्टिकोण क्या होना चाहिए।

एक सकारात्मक पहलू इस आकलन का यह है कि 1980 और 1990 के दशकों से भिन्न, जब वित्तीय संकट विकासनशील और विकसत दोनों प्रकार के देशों में एक समान रूप से अकसर आते रहते थे, वहीं पिछला दशक इस प्रकार के संकटों से उल्लेखनीय रूप से मुक्त रहा है। विश्वभर में उच्च तेल मूल्य, भारी कारोबारी असफलताएं, स्टॉक मार्केट में भारी उतार-चढ़ाव, जो इस अवधि में देखी गयी, का परिणाम वित्तीय संकट के रूप में नहीं हुआ और न ही इसका वित्तीय मध्यस्थकों पर कोई विघटनकारी प्रभाव हुआ। इसका कारण यह रहा कि कुछ देशों द्वारा जोखिम का व्यापक संवितरण कर दिया गया, जबकि अन्यों ने समग्र नरम व्यापक आर्थिक तथा स्वस्थ वैश्विक वृद्धि की स्थितियों को जो कि इस अवधि में विद्यमान रहीं, इसका कारण माना।

इन अन्तरराष्ट्रीय गतिविधियों और भारत के लिए उनके निहितार्थों से मैंने क्या सीखा? इसका मेरे पास कोई स्पष्ट उत्तर नहीं है। हमें इन वित्तीय गतिविधियों को इस रूप में अंगीकार करना होगा कि हम वित्तीय स्थिरता को बनाए रखना सुनिश्चित कर सकें और यह कि हम घरेलू बाजार के सहभागियों - वित्तीय और गैर-वित्तीय दोनों को,इस योग्य बना सकें कि वे उस प्रकार के जोखिमों से, जो देश में तथा विदेशों में महत्तर बाजार उदारीकरण के साथ उभर रहे हैं, उत्तरोत्तर रूप में निपट सकें।

मौद्रिक प्राधिकरण तथा वित्तीय क्षेत्र के विनियामक के रूप में, हमें अपनी स्वयं की जोखिम प्रबन्धन की क्षमताओं को - हमारे आन्तरिक प्रयोजनों तथा विनियमित संस्थाओं की जोखिम प्रबन्ध क्षमता के मूल्यांकन - दोनों रूपों में बढ़ाना होगा। हम निरन्तर रूप से यह प्रयास करेंगे कि हम बाजार सहभागियों की जोखिम प्रबन्ध की दक्षताओं और क्षमताओं को बढ़ायें तथा बाजारों की व्यष्टिगत बुनियादी संरचना में सुधार लायें ताकि वित्तीय स्थिरता बनाये रखी जा सके। इस बीच हमें

अपने ध्यान में यह रखना होगा कि हमारी अर्थव्यवस्था की प्रकृति विविधतापूर्ण हो जैसा कि मैंने पहले ही उल्लेख किया है।

भारत में वित्तीय व्युत्पन्नी लिखतों के विकास के प्रति हमारा दृष्टिकोण यह होगा कि संगत वित्तीय मध्यस्थकों के अन्दर सशक्त जोखिम प्रबन्ध प्रणालियों को अपनाने के लिए सक्रिय रूप से बल दिया जाए और हमारी दृष्टि से, खासकर बैंकों में। हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि नये जोखिम लिखतों को लागू करने से सम्पूर्ण प्रणाली की जोखिम प्रबन्ध क्षमताओं की वास्तव में वृद्धि हो, अपर्याप्त तैयारी के कारण इसके विपरीत नहीं।

रिज़र्व बैंक में जोखिम प्रबन्ध की झलकें

अन्य सभी केन्द्रीय बैंकों की तरह भारतीय रिज़र्व बैंक भी एक वित्तीय संस्था है जिसे विभिन्न प्रकार के जोखिमों का सामना करना पड़ता है। गत अनेक वर्षों से रिज़र्व बैंक की जोखिम सम्भावनाओं का संरचनागत रूपान्तरण हुआ है। पहले इसके तुलन-पत्र में रुपया मूल्यवर्गित आस्तियां दिखाई जाती थीं, इसके विपरीत अब प्रमुख विदेशी मुद्राओं में मूल्यवर्गित आस्तियों के अंश ज्यादा होते हैं। इस रूपान्तरण का ताप्तर्य है - रुपयों की दृष्टि से इसकी आस्तियों के मूल्य में तथा रुपयों की दृष्टि से इसके चालू अर्जनों में अधिक उद्वेगशीलता। इस पर जोर दिये जाने की जरूरत है कि जहाँ कोई बैंक या कम्पनी निकाय किसी भी देश में विदेशी मुद्रा जोखिम को समाप्त करने का विकल्प चुन सकता है, परन्तु रिज़र्व बैंक जैसा कोई भी केन्द्रीय बैंक, जिसकी विदेशी मुद्रा में कोई देयता नहीं हैं, कुछ मामूली-सी सीमा से अधिक जाकर विनिमय दर जोखिम को सुरक्षित नहीं कर सकता। इस सम्बंध में काफी लम्बे समय तक रिज़र्व बैंक द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण था - प्रारक्षित निधियों का विशाखीकृत संविभाग रखना, मुद्राओं और लिखतों दोनों दृष्टियों से तथा पूंजीकरण का एक सुदृढ़ स्तर रखना। रिज़र्व बैंक प्रारक्षित निधियों के प्रबन्धन की वार्षिक और छमाही रिपोर्टों में जनवरी 2005 से अपनी जोखिम प्रबन्ध नीतियों को प्रकट करने में बहुत पारदर्शी रहा है।

हमारी आस्तियों के बाजार जोखिम प्रबन्धन से जुड़े मुद्दों और इसलिए हमारे तुलन-पत्रों की सत्य-निष्ठा जो कि सम्पूर्ण वित्तीय प्रणाली के इतनी अनिवार्य है, के अलावा, हमें उत्तरोत्तर रूप में परिचालनगत जोखिम के मुद्दों से भी, जिनका मैंने पहले उल्लेख किया है, निपटना होगा। भुगतान और निपटान प्रणाली के संस्थागत उत्तरदायित्व के रूप में हम अपनी सभी सूचना प्रौद्योगिकी (आइटी) प्रणालियों, बैक अप, वैकल्पिक साइटों तथा इसी प्रकार की अन्य व्यवस्थाओं पर अधिक ध्यान दे रहे हैं।

जोखिम प्रबन्ध की सीमाएं

आर्थिक संस्थाओं द्वारा जोखिम प्रबन्ध की नीतियों तथा संव्यवहारों को इस आशय से अपनाना कि ये जोखिम विकल्प के चुनने से आते हैं, अनायास नहीं, इससे मूल्यवर्धन होता है। तथापि, बाजार की लिखतों के माध्यम से जोखिम का सुरक्षा कवर प्राप्त करना जोखिमों के पुनः संवितरण के रूप में परिणत हो जाता है। आदर्शतः यदि पुनर्संवितरण प्रत्येक संस्था के लिए अभीष्टतम स्तर के वैज्ञानिक मूल्यांकन तथा जोखिमों के समूहन के आधार पर किया जाता है, तो इसका परिणाम व्यापक स्तर पर जोखिमों की समग्र कमी के रूप में हो सकता है। परन्तु सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को अभी भी जोखिमों का सामना करना होगा। साथ ही हेजिंग उत्पादों के उचित रूप से कार्य करने के लिए भी यह अनिवार्य है कि जोखिम परिवर्तियों का विषय होना चाहिए। यदि मूल्यों की गतिविधियां काफी लम्बे समय तक एकदिशीय हैं तो सुरक्षण के विक्रेता सुरक्षण के क्रेताओं से भारी प्रीमियम की मांग करते हैं।

उपर्युक्त के अलावा, कुछ अन्य अति प्रखर मुद्दे भी हैं जो जोखिम प्रबन्धन के लिए चिंता के विषय हैं। यह

भलीभांति ज्ञात है कि बाजार परम्परागत गणितीय वित्त की कुछ धारणाओं और अवधारणाओं का सुस्पष्ट रूप से उल्लंघन करते रहते हैं। वित्तीय मूल्यों में उद्वेगशीलता तथा इस उद्वेगशीलता की प्रवृत्ति जो कभी-कभी उन घटनाओं में हो जाती हैं जो आम तौर पर बुनियादी तत्वों से जुड़ी किसी बाहरी खबरों से संबंधित नहीं होती हैं - यह प्रवृत्ति व्यावहारिक वित्त में लम्बे समय तक अनुसंधान का विषय रही है।

जोखिम प्रबंधन तथा हैजिंग के व्यावहरिक आयामों ने हाल के वर्षों में शिक्षा-विदों तथा अनुसंधानकर्ताओं के बीच काफी ध्यान आकर्षित किया है। अन्य बातों में से किसी संस्था के हेजिंग सम्बन्धी निर्णय दो महत्त्वपूर्ण कारकों द्वारा प्रभावित होते हैं - (क) इस सम्बंध में प्रतिस्पर्धियों का जोर, तथा (ख) मानव व्यवहार की विसंगतियां। यह उत्तरवर्ती कारक महत्त्वपूर्ण है। अधिकांशतः संस्थाओं के पास जोखिम पर निर्णय लेने और उनसे निपटने के लिए हमेशा बौद्धिक या भावनात्मक धड़कने नहीं होतीं, जब तक कि वे उनके कार्य-निष्पादन को प्रभावित न करें और तब तक बहुत देर हो जाती है। बहुत से लोग जब वे लक्ज़री कार खरीदते हैं और जब वे उसी कार के लिए बीमा खरीदते हैं एक ही प्रकार से नहीं सोचते। जब हम जोखिम प्रबन्ध की सम्भावनाओं के बारे में शिक्षित किये जाते हैं, तो हम भारी संभावनाओं से परिचित हो जाते हैं कि वित्त मानव कल्याण को सुधारने के लिए है, परन्तु हम हमेशा इसे भावनाओं की दृष्टि से हमेशा आसान नहीं मानते कि इस सम्भावना का लाभ उठाया जाए। अनुभवी व्यापारी इसे अच्छी तरह से जानते हैं कि कभी-कभी यह कितना कठिन हो जाता है कि हानि देने वाली स्थिति को कैसा छोड़ा जाए। जोखिम प्रबन्धन के क्षेत्र को इसकी जरूरत है कि वह जोखिम के प्रबन्धन में मानवीय कमजोरियों को न्यूनतम करने के अपनी पद्धतियां बनायें।

अन्तिम, क्या जोखिम प्रबन्धन को अपनाने तथा जोखिम को कम करने वाले उत्पादों के उपयोग ने वित्तीय बाजार को पहले की अपेक्षा एक अधिक सुरक्षित स्थान बना दिया है? इस प्रश्न का उत्तर देना कठिन है। हाल के एक साक्षात्कार में प्रो.रोबर्ट मर्टन जिन्होंने माइरौन स्कूल्स तथा फिशर ब्लैक के साथ मिलकर 1970 के दशक में प्रसिद्ध आप्शन प्राइसिंग फार्मूला की खोज की थी, ऐसा बताया जाता है - कि 'वास्तविक कथा यह नहीं है कि 1998 में एलटीसी एम को क्या हुआ, परन्तु बाद में अमरान्थ को क्या हुआ या क्या नहीं हुआ संस्थाओं ने समायोजन किया है और हमने सीख लिया है कि इनमें से कुछ संकट से कैसे निपटा जाए जो अब संकट नहीं रह गये हैं' (टेट 2007)।

संदर्भ

बर्न्सटीन पीटर (1996): अगेन्स्ट दि गॉड्स: दि रिमार्केबल स्टोरी ऑफ रिस्क, होबोकेन, एन जे., जॉन विले।

कोहन, डोनाल्ड (2007): 'फाइनेंसियल स्टेबिलिटि एण्ड पालिसी इश्यूज', फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ एटलान्टा के 2007 की वित्तीय मार्केट कान्फ्रेंस, सी आइलैंड, जार्जिया, 16 मई 2007 (www.bis.org. पर उपलब्ध)।

टेट गिलियन (2007): ''दि एप्लायेंस ऑफ फाइनेंसियल साईंस'' फाइनेंसियल टाइम्स, मई 21, 2007।